6. आलोचना

आलोचना शब्द 'लोच' धातु से बना है। 'लोच' का अर्थ होता है देखना। इसलिए किसी वस्तु या कृति की सम्यक् व्याख्या उसका मूल्यांकन आदि करना ही आलोचना है। "**आ समतात् लोचनम् अवलोकनम् इति आलोचनम्।**" समीक्षा और समालोचना शब्दों का भी यही अर्थ है। अंग्रेजी के 'क्रिटिसिज्म' (Criticism) शब्द के समानार्थी रूप में 'आलोचना' का व्यवहार होता है। भारत की प्राचीन भाषा संस्कृत में प्रचलित टीका व्याख्या और काव्य सिद्धान्त आदि के निरूपण के लिए भी आलोचना शब्द का प्रयोग किया जाता है। किन्तु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का स्पष्ट मत है कि "आधुनिक आलोचना संस्कृत के काव्य सिद्धान्त निरूपण से स्वतन्त्र वस्तु है।"

आलोचना का कार्य—आलोचक किसी कवि या लेखक की कृति को देखता है या परखता है। आलोचना कवि या लेखक और पाठक के बीच की शृंखला है। राजशेखर ने कवि कर्म को प्रकाश में लाना ही आलोचक की प्रतिभा कहा है। आलोचना का कार्य है किसी साहित्यिक रचना को अच्छी तरह परीक्षा करके उसके रूप गुण और अर्थ व्यवस्था का निर्धारण करना।

"यदि हम साहित्य को जीवन की व्याख्या मानें तो आलोचना को उस व्याख्या की व्याख्या मानना पड़ेगा।" बानी कि 'आलोचना का कर्त्तव्य साहित्यिक कृति की विश्लेषण परक व्याख्या है। साहित्यकार जीवन और अनुभव के जिन तत्वों के संश्लेषण से साहित्य की रचना करता है, आलोचना उन्हीं तत्वों का विश्लेषण करती है। साहित्य में जहाँ रागतत्व प्रधान है, वहाँ आलोचना में बुद्धि तत्व। आलोचना ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों और शक्तियों का भी आकलन करती है और साहित्य पर उनके पड़ने वाले पर प्रभावों की विवेचना करती है। व्यक्तिगत रूचि के आधार पर किसी कृति की निन्दा या प्रशंसा करना आलोचना का धर्म नहीं है। कृति की व्याख्या और विश्लेषण क लिए आलोचना में पद्धति और प्रणाली का महत्व होता है। आलोचक करते समय आलोचना अपने व्यक्तिगत राग-द्वेष, रूचि-अरूचि से तभी बच सकता है, जब वह पद्धति का अनुसरण करता है। वह तभी वस्तुनिष्ठ होकर साहित्य के प्रति न्याय कर सकता है। इस दृष्टि से हिन्दी में आचार्य रामचन्द्रशुक्ल को श्रेष्ठ आलोचक माना जाता है।'

(1) **सैद्धान्तिक आलोचना**—इस प्रकार की आलोचना को अंग्रेजी में (Speculative Criticism) कहते हैं। इसमें साहित्य के विभिन्न रूपों का विवेचन करके साहित्य तत्व स्थापित किए जाते हैं। सैद्धान्तिक आलोचना में शास्त्रीय मानदण्डों को निश्चित किया जाता है। यहाँ एक ही प्रकार की अनेक कृतियों का अध्ययन कर शास्त्रीय मानदण्डों के रूप में जब किन्हीं सामान्य नियमों की स्थापना की जाती है, तब उस आलोचना को सैद्धान्तिक आलोचना कहा जाता है।

किसी कृति विशेष का मूल्यांकन करते समय किन-किन सामान्य सिद्धान्तों का अवलम्बन करना चाहिए, साहित्यिक विधाओं की विवेचना में किन-किन सामान्य तत्वों के आधारभूत मानना चाहिए तथा साहित्य की आलोचना में किन-किन सामान्य सिद्धान्तों का परिपालन करना चाहिए आदि समस्त बातों पर प्रस्तुत प्रणाली के अन्तर्गत विचार किया जाता है। इस आलोचना में साहित्य के विभिन्न रूपों का विवेचन करके साहित्य तत्व स्थापित किए जाते हैं। जैसे—कविता क्या है? उसका उद्देश्य क्या है? समाज की दृष्टि से उसके क्या लाभ हैं? आदि विविध बातों को इसी पद्धति से निर्धारित किया जाता है।

(2) **मनोवैज्ञानिक आलोचना**—इस प्रकार की आलोचना को अंग्रेजी में (Psychological Criticism) कहते हैं। प्रस्तुत आलोचना बीसवीं शताब्दी की देन है। अत: मनोविज्ञान के अभ्यासक फ्रायड, एडलर और युग के मनोविश्लेषण सम्बन्धी सिद्धान्तों का प्रभाव हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं पर परिलक्षित होता है। वैसे हिन्दी आलोचना के स्वरूप पर भी दृष्टिगोचर होता है। प्रस्तुत आलोचना का प्रधान उद्देश्य रचनागत पात्रों की, प्रवृत्तियों की आदर्शों की एवं भावनाओं की अन्त: प्रेरणाओं का मनोविश्लेषण करना है।

किसी भी रचना की परख करने के पूर्व रचनाकारों के मन:स्तरों का अध्ययन करना भी आवश्यक है। अत: मनोवैज्ञानिक आलोचक की सफलता रचनाकार की मानसिक प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए सही-सही मूल्यांकन करने पर निर्भर है। यह आलोचना बहुत कुछ व्याख्यात्मक होती है। कवि या लेखक की मन:स्थिति, सामाजिक परिस्थिति, उसका स्वभाव आदि बातों का परिपूर्ण विचार करके निष्कर्ष निकाला जाता है। आजकल हिन्दी में इस प्रकार की मनोवैज्ञानिक आलोचना की जाने लगी है।

Scanned with CamScanner

(3) **तुलनात्मक आलोचना**—इस प्रकार की आलोचना को अंग्रेजी में (Comporative Criticism) कहते हैं। इसमें एक ही विषय की दो या अधिक रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इसका प्रादुर्भाव जोसेफ एडिसन की आलोचना से हुआ। तुलनात्मक मूल्य निर्धारण ही इस आलोचना का लक्ष्य होता है। यह पद्धति उन स्थलों पर उपयुक्त होती है, जहाँ हमें तुलनात्मक दृष्टि से किसी को छोटा या बड़ा सिद्ध नहीं करना होता, वरन् एक ही प्रकार की विशेषताओं, नियमों और सिद्धान्तों के प्रभाव को स्पष्ट करना होता है।

हिन्दी साहित्य क्षेत्र में प्रस्तुत प्रणाली का सूत्रपात करने का श्रेय पद्मसिंह शर्मा को है। उनकी 'विहारी सतसई' प्रस्तुत प्रणाली के उत्कृष्ट उदाहरण है। उनके बाद कृष्ण बिहारी का नाम आता है।

(4) **मार्क्सवादी आलोचना**—साहित्य और समाज जीवन की अभियन्ता, मार्क्सवादी समीक्षा का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस सन्दर्भ में मार्क्सवादी विचारक काडवेल का कथन है—"साहित्य का मोती समाज की सीपी में ही उत्पन्न होता है। मार्क्सवादी समीक्षा समाज की कसौटी पर साहित्य का मूल्यांकन करती है। साहित्य के इस सामाजिक पक्ष का स्वीकार मार्क्सवादी समीक्षा की प्रधान विशेषता है। छायावाद के ह्रास के बाद हिन्दी में मार्क्सवादी समीक्षा का उदय हुआ। मार्क्सवादी प्रतिमानों के कारण इस पद्धति को मार्क्सवादी आलोचना कहते हैं। इसमें कुछ महत्वपूर्ण बातें होती हैं—"

(1) इसमें आलोचक काव्य में प्रेषणीयता पर अधिक बल देता है।

(2) उपयोगितावादी पक्ष पर अधिक बल देता है।

(3) उस कृति के वर्ण्यविषय को महत्वपूर्ण मानता है—जो जनोपयोगी तथा जनवादी होता है।

(4) काव्यशास्त्र के प्रतिष्ठित प्रतिमान की कसौटी को अथवा परम्परागत तत्वों को महत्व नहीं दिया जाता।

(5) सामाजिक या भौतिक यथार्थवाद को महत्व दिया जाता है।

(6) रचना का मूल्यांकन बौद्धिक कसौटी पर किया जाता है।

आलोचना का विकास—आलोचना का आरम्भ रचना के समानान्तर ही होता है। आधुनिक हिन्दी गद्य का प्रणयन भारतेन्दु युग में नाट्य विधा से हुआ। उसी समय उस विधा की आलोचना का भी जन्म हुआ। 1883 ई. में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'नाटक' शीर्षक एक लम्बा निबन्ध (60 पृष्ठ) लिखकर आलोचना का सूत्रपात किया। इस युग में 'हिन्दी प्रदीप' पत्र ही स्तरीय आलोचनाएँ प्रकाशित करता था। बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन की पुस्तक समीक्षाएँ 'आनन्द कादंबिनी' में प्रकाशित हुईं। उन्होंने श्री निवासदास कृत 'संयोगिता स्वयंवर' और गदाधर सिंह कृत 'बंग-विजेता' के अनुवादों की विस्तृत आलोचना की थी। द्विवेदी युग में आलोचना की पाँच पद्धतियाँ विकसित हुईं-1) शास्त्रीय आलोचना 2) तुलनात्मक आलोचना 3) शोधपरक आलोचना 4) परिचयात्मक आलोचना 5) व्याख्यात्मक आलोचना। इनमें शास्त्रीय आलोचना का सम्बन्ध रीतिकालीन ग्रन्थों से है। द्विवेदी युग में इस परम्परा को जगन्नाथप्रसाद भानु (काव्य प्रभाकर 1910 ई., छन्द सारावली 1917 ई.) और लाला भगवानदीन (अलंकार मंजूषा, 1916 ई.) ने जीवित रखा है। तुलनात्मक आलोचना द्विवेदी युग की प्रमुख आलोचना पद्धति रही है। इसका सूत्रपात पदमसिंह शर्मा ने बिहारी और सादी की तुलना द्वारा 1907 ई. में किया। मिश्रबन्धुओं ने अपने ग्रन्थ 'हिन्दी नवरत्न' (1910 ई.) में भी तुलनात्मक आलोचना की महत्ता को प्रतिष्ठापित किया। कृष्ण बिहारी मिश्र और लाला भगवानदीन 'देव और बिहारी' को तुलनात्मक आलोचना पद्धति में एक-दूसरे से बड़ा बताने की जुगत करते रहे। शोधपरक आलोचना का विकास "नागरी प्राचारिणी पत्रिका" (1897 ई.) के प्रकाशन से माना जाता है। मिश्रबन्धु विनोद (1913 ई.) में इस आलोचना दृष्टि को महत्व दिया गया। इसी क्रम में इसमें कवियों के काव्य के सम्बन्ध में समीक्षकों के मतों का प्रकाशन किया गया। कवियों की उपलब्ध एवं अनुपलब्ध कृतियों के विवरण के साथ ही उनके जीवन वृत्त को भी प्रकाशित किया गया। चन्द्रधरशर्मा गुलेरी ने एक गम्भीर आलोचना पत्र निकाला 'समालोचक' (1902 ई.)। यह पत्र कुछ समय ही चल सका पर इससे हिन्दी आलोचना का स्तर ऊँचा हो गया। परिचयात्मक अलोचना का अस्तित्व भारतेन्दु युग से ही है। द्विवेदी युग में इस आलोचना पद्धति का स्वरूप स्थिर हुआ। इसका श्रेय महावीर प्रसाद द्विवेदी एवं उनके द्वारा सम्पादित पत्रिका 'सरस्वती' को जाता है। इस आलोचना पद्धति के अन्तर्गत किसी ग्रन्थ या शोध प्रबन्ध का पूर्ण परिचय देने की कोशिश की जाती थी। आलोच्य ग्रन्थ/प्रबन्ध किस विषयवस्तु पर आधारित है, इसकी लेखन शैली क्या है, यह किसी के लिए उपयोगी है या नहीं, इस तरह के ग्रन्थ किसी के लिए आवश्यक हैं या नहीं, जीवन के किसी दृष्टिकोण में कुछ नवीनता लाने में सक्षम हैं या नहीं, इसकी भाषा और सर्जनात्मकता

Scanned with CamScanner

दोषरहित है या नहीं—इन सब तथ्यों का परीक्षण और उसके बाद ग्रन्थ का विश्लेषण ही परिचयात्मक आलोचना का आधार हैं। आचार्य द्विवेदी की महत्ता को आचार्य शुक्ल ने स्वीकारा है। आलोचना विधा का अध्ययन आचार्य शुक्ल को ही केन्द्र में रखकर किया जाता है। व्याख्यात्मक आलोचना का सूत्रपात बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन ने किया। बालकृष्ण भट्ट और बालमुकुंद गुप्त ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया। इसके तहत किसी भी कृति की मूल्यपरक आलोचना की जाती है। ये मूल्य नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं सौन्दर्यपरक हो सकते हैं। यह आलोचना विधा का आरम्भिक चरण था जिसे शुक्ल पूर्व हिन्दी आलोचना कहा जाता है। समर्थ सैद्धान्तिक आलोचक के रूप में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इस क्षेत्र में उभरे। उनकी सम्भावना का प्रमाण है कि आलोचना साहित्य को अध्ययन की दृष्टि से शुक्ल पूर्व युग, शुक्ल युग और शुक्लोत्तर युग में विभाजित किया गया। वह घटना छायावाद युग में घटित हुई। 1908 ई. तक आलोचना का स्वरूप सामाजिक-सांस्कृतिक रहा। इसी वर्ष रामचन्द्र शुक्ल का आलोचनात्मक निबन्ध 'कविता क्या है' सरस्वती में प्रकाशित हुआ। हिन्दी की सैद्धान्तिक आलोचना को कई विद्वानों ने प्रस्तुत किया, जो इस प्रकार हैं—गुलाबराय (नवरस, 1920 ई.), श्यामसुन्दरदास (साहित्यालोचन, 1922 ई.), रामचन्द्र शुक्ल (काव्य में रहस्यवाद, 1929 ई.) इत्यादि। इन विद्वानों ने भारतीय और पाश्चात्य आलोचना सिद्धान्तों का एक समन्वित स्वरूप हिन्दी साहित्य संसार के लिए बनाया। इसमें रामचन्द्र शुक्ल का योगदान सबसे अधिक रहा। आलोचकों ने इनकी परम्परा को आगे बढ़ाया। हजारीप्रसाद द्विवेदी, विश्वनाथप्रसाद मिश्र, नन्ददुलारे वाजपेयी, रामविलास वर्मा, डॉ. सत्येन्द्र, नगेन्द्र, नामवर सिंह इत्यादि हिन्दी साहित्य के प्रमुख आलोचक रहे हैं।

हिन्दी आलोचक का वास्तविक आचार्य रामचन्द्रशुक्ल होते हैं। उन्होंने सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के इतिहास को दर्शाया। इस इतिहास में उन्होंने सभी प्रयोगशाला रचनाकारों का स्थान निर्धारित किया। उन्होंने हिन्दी साहित्य को समझने की एक दृष्टि दी, जो आज हिन्दी के लेखक और सिद्धान्त का सैद्धान्तिक संस्कार बनी हुई है। हिन्दी साहित्य के इतिहास के विद्वान शुक्ल ने गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास और जायसी पर विस्तृत समीक्षाएँ लिखीं। लोकमंगल में नई विचारधारा सम्मिलित है। आचार्य शुक्ल के पश्चात् हिन्दी में अनेक लेखकों पर स्वतन्त्र आलोचनात्मक पुस्तकें लिखीं। कवीर को समझने क लिए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कबीर पुस्तक लिखी। डॉ. निराला को संकेत के लिए रामविलास शर्मा की निराला की साहित्य साधना और दूधनाथ सिंह की निराला आत्महता आस्था पुस्तक को पढ़ना अनिवार्य है। हिन्दी आलोचना में यह परम्परा अब तक संस्थागत है। इसी तरह के हिन्दी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए भी कई ग्रन्थ लिखे गए जिनमें से एक हजारी प्रसाद ग्रन्थ की हिन्दी साहित्य की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसी तरह रीतिकाल, भारतेन्दु युग, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, कहानी नई को समझने के लिए हिन्दी आलोचना की अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकें उपलब्ध हैं। इस परम्परा का सूत्रपातशुक्ल की आलोचना होती है।

7. यात्रा-वृत्तान्त

Scanned with CamScanner